पहला प्रवचन

कौन कहता है कि मानवता को बचाए जाने की जरूरत है?

(Translated book- "From Darkness to Light", Chapter #1)

प्रश्न: ओशो,

हम मानवता को और अधिक पतन से कैसे बचा सकते हैं?

मानवता को बचाने की बात करने का प्रचार करना सभी धर्मों के ट्रेड सीक्रेट्स, व्यावसायिक रहस्यों में से एक है।

यह एक बहुत ही अजीब सा खयाल है, लेकिन यह इतना पुराना है कि कोई इसके भीतर छिपे अभिप्राय को समझता हुआ दिखाई नहीं पड़ता। कोई भी यह नहीं पूछता कि तुम मानवता को बचाने के लिए क्यों चिंतित हो? और तुम हजारों सालों से मनुष्यता को बचा रहे हो, लेकिन कुछ भी बचता हुआ दिखाई नहीं पड़ता।

पहली बात, क्या मानवता को बचाए जाने की कोई भी जरूरत है?

इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए सभी धर्मों ने 'मौलिक पतन' नाम की एक नितांत काल्पनिक धारणा निर्मित कर ली है। क्योंकि जब तक पतन न हुआ हो तब तक बचा लेने का प्रश्न ही नहीं उठता है। और मानवता के मौलिक पतन की धार्मिक धारणा बिलकुल बकवास है।

मनुष्य का हर संभव मार्ग से विकास होता रहा है, पतन नहीं। मौलिक पतन के विचार का समर्थन करने का एकमात्र उपाय है चार्ल्स डार्विन द्वारा प्रस्तावित विकासवाद के सिद्धांत का समर्थन; लेकिन धर्म उस सिद्धांत का उपयोग नहीं कर सकते, क्योंकि वे उससे बहुत अपमानित अनुभव करते हैं। चार्ल्स डार्विन का विचार निश्चित रूप से इस प्रकार रखा जा सकता है--अगर मनुष्य के द्वारा नहीं, तो कम से कम बंदरों के द्वारा--कि वह एक मौलिक पतन था। निश्चित ही अगर मनुष्य बंदरों से विकसित हुआ है तो वह जरूर वृक्षों से गिरा होगा, और जो बंदर नहीं गिरे होंगे वे अवश्य ही उन मूढ़ों पर हंसे होंगे जो गिर गए थे। और इस बात की संभावना है कि ये बंदर कमजोर थे जो वृक्षों पर टिक नहीं पाए।

बंदरों में एक हायरेरकी होती है, कौन ऊंचा, कौन नीचा। शायद यही मानसिकता और यही ऊंच-नीच की भावना मनुष्य में भी चली आ रही है; यह वही का वही मन है। यदि तुम बंदरों को वृक्ष पर बैठा हुआ देखो, तो तुम आसानी से पता लगा सकते हो कि उनमें से मुखिया कौन है: वह वृक्ष पर सबसे ऊंचे स्थान पर बैठा होगा। फिर उसके बाद होगा अति सुंदर, युवा बंदरियों का एक बड़ा समूह--उसका हरम। उसके बाद एक तीसरा समूह होगा।

तो बहुत दिनों से मैं इस तीसरे समूह के बारे में सोच रहा था, परंतु मेरे पास इसके लिए अंग्रेजी में कोई शब्द नहीं था। भारत में इस समूह को हम चमचा कहते हैं। 'चमचे' को अंग्रेजी में 'स्पून' कहते हैं, और ये खून चूसने वाले लोग हैं। जैसे तुम चम्मच से किसी बोतल से चीजें निकालते हो--ठीक वैसे ही जिनके पास पद और धन है, ये चमचे उनसे ये चीजें निकालते रहते हैं। निश्चित ही, इन चमचों को इस तरह के लोगों को मक्खन लगाना पड़ता है, उनकी तारीफ करनी पड़ती है।

किंतु संयोगवश देवराज ने आज मुझे एक सही शब्द भेजा है। क्योंकि 'चमचा' शब्द का अंग्रेजी में एकदम सही अनुवाद नहीं हो सकता; 'स्पून' से इसका सारा अर्थ ही खो जाता है। उसने मुझे एक कैलिफोर्नियन शब्द

भेजा है: दि ब्राउन नोज़। उसने साथ में एक वेबस्टर डिक्शनरी भी भेजी है, क्योंकि शायद मैं 'ब्राउन नोज़' का अर्थ न समझ पाऊं; और निश्चित ही मैं नहीं समझ पाता कि ब्राउन नोज़ का क्या अर्थ है।

उसने एक नोट भी लिख कर भेजा है, शायद यह सोच कर कि कहीं डिक्शनरी से भी सही अर्थ समझने में मदद न मिले, क्योंकि वेबस्टर डिक्शनरी इस शब्द के अर्थ को इस ढंग से लिखती है कि वह कहीं से भी अश्लील, भद्दा न लगे। तो उसने मुझे एक नोट भी लिख कर भेजा है: ''यूरोप में हम इस तरह के लोगों को 'आर्स किसर्स' कहते हैं।'' और 'चमचों' का यही सही मतलब है।

तो मुखिया बंदर सबसे ऊपर, उसके बाद बंदरियों का हरम जिनको वह नियंत्रित करता है, और उसके बाद चमचों का झुंड! और फिर तुम हायरेरकी की निचली श्रेणियों पर आओ। सबसे निचली शाखाओं पर होते हैं सबसे गरीब बंदर, उनकी न कोई प्रेमिका है, न प्रेमी--न कोई सेवक। लेकिन शायद इसी समूह से मानवता विकसित हुई है।

इस समूह में भी कुछ लोग ऐसे रहे होंगे जो कि इतने कमजोर थे कि वे निचली शाखाओं पर भी नहीं टिक पाए। उन्हें धक्का दिया गया होगा, खींचा गया होगा, फेंका गया होगा, और किसी तरह उन्होंने स्वयं को जमीन पर गिरा हुआ पाया। वह था मौलिक पतन।

बंदर अभी भी आदमी पर हंसते हैं। निश्चित ही यदि तुम बंदर की तरफ से सोचो: दो पैरों पर चलने वाला बंदर... यदि तुम बंदर हो और उसकी तरफ से सोचो, तो किसी बंदर को दो पैरों पर चलते देख कर तुम सोचोगे, ''क्या वह किसी सर्कस वगैरह में शामिल हो गया है? इस बेचारे के साथ क्या हुआ? वह बस जमीन पर रहता है; वह वृक्षों पर कभी नहीं आता, उसे वृक्षों की उन्मुक्त स्वतंत्रता का, वृक्षों की ऊंची शाखाओं पर बैठने के सुख का कुछ पता नहीं। वह वास्तव में गिर गया है, उसका पतन हुआ है।''

इसके अलावा, मौलिक पतन की धारणा के लिए धर्मों के पास कोई तर्कपूर्ण समर्थन नहीं है। उनके पास तो कहानियां हैं, लेकिन कहानियां तर्क नहीं हैं, कहानियां प्रमाण नहीं हैं। और कहानियों से जो तुम कहना चाहते हो, उससे ठीक विपरीत अर्थ भी लगाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, ईसाइयों की मौलिक पतन की धारणा ईश्वर को असली अपराधी बना देती है, और यदि किसी को बचाए जाने की आवश्यकता है तो वह है ईसाइयों का ईश्वर।

एक पिता जो अपने बच्चे को बुद्धिमान होने और चिरायु होने से रोके, ऐसा पिता निश्चित ही पागल है। यहां तक कि बुरे से बुरा बाप भी अपने बेटे को अक्लमंद और ज्ञानी बनाना चाहता है। एक क्रूरतम पिता भी अपनी संतान को सदैव जीवित रखना चाहता है। परंतु यह परमपिता मनुष्य को दो वृक्षों के फल खाने से रोक देता है--ज्ञान-वृक्ष का फल और अमृत-जीवन के वृक्ष का फल। यह अजीब किस्म का ईश्वर लगता है; किसी भी प्रकार से यह संभव नहीं कि ऐसे ईश्वर को एक अच्छा पिता माना जाए। यह भगवान तो इंसान का दुश्मन जान पड़ता है।

अतः संरक्षण की जरूरत किसे है? "ईश्वर ईर्ष्यालु है"-यह तर्क उस शैतान का था जिसने सर्प के रूप में आकर ईव के मन को फुसलाया था। मेरे अनुसार, बहुत सी ऐसी महत्वपूर्ण चीजें हैं जिन्हें भलीभांति समझने की जरूरत है। उस शैतान ने ईव को क्यों चुना, आदम को क्यों नहीं? वह सीधे ही आदम को चुन सकता था परंतु पुरुष का स्वभाव कम संवेदनशील होता है, वह कमजोर प्रवृत्ति का नहीं होता, अधिक घमंडी और अहंकारी होता है। शायद आदम को सर्प के साथ वार्तालाप करने में कोई रूचि न होती; वह इसे अपनी गरिमा के अनुकूल भी नहीं समझता। और सबसे बड़ी बात यह है कि सांप के तर्क से पूर्णतः सहमत होना भी एक पुरुष के लिए कठिन है। वह निश्चित ही उसके संग विवाद करता, झगड़ता। क्योंकि किसी के साथ राजी होने से अहंकार को ऐसा लगता है कि जैसे वह हार गया। अहंकार केवल असहमति और संघर्ष ही जानता है--जीत या हार; जैसे कोई अन्य रास्ता ही न हो, जैसे केवल दो ही मार्ग हैं-विजय या पराजय। अहंकार के लिए निश्चित ही केवल यही

दो रास्ते हैं। परंतु संवेदनशील चेतना के लिए एक मार्ग और है--उसे समझना जो सही है, जो यथार्थ है। प्रश्न मेरा या उसका नहीं है, प्रश्न किसी की जीत-हार का भी नहीं है; यहां प्रश्न है कि सत्य क्या है?

स्त्री स्वभावगत रूप से तर्क में विश्वास नहीं करती। उसने सुना और पाया कि बात बिल्कुल ठीक है। ज्ञान और अमरता वर्जित है। सर्प ने समझाया कि ईश्वर नहीं चाहता कि मनुष्य ईश्वर जैसा हो जाए, यदि तुम बुद्धिमान हुए तो तुम ईश्वर तुल्य हो जाओगे। बुद्धिमान होने के बाद फिर तुम्हारे लिए शाश्वत-जीवन का वृक्ष ढूंढना जरा भी मुश्किल नहीं होगा। वास्तव में ज्ञान का ही दूसरा पहलू है-अमृत। अगर तुम बुद्धिमान हो और तुम्हारे पास सनातन-जीवन है तो फिर ईश्वर की परवाह कौन करेगा? ईश्वर के पास ऐसा क्या है जो तुम्हारे पास नहीं है? केवल तुम्हें गुलाम बनाए और हमेशा निर्भर बनाए रखने के लिए, तुम्हें अनुभवहीन बनाए रखने और अमृत-स्वाद से वंचित रखने के लिए ही ईडन के विशाल उद्यान में उसने केवल दो ही वृक्षों पर प्रतिबंध लगाया है।

यह तर्क एक साफ-सुथरा तथ्य था, बिल्कुल स्पष्ट कथन था। अब तक, जिस व्यक्ति ने सत्य को मानवता तक पंहुचाया, उसे शैतान बता कर निंदित किया गया है। और जिसने इंसान को सत्य तक पंहुचने और जीवन को जानने से रोका, भगवान कहकर उसकी स्तुति की गई है। परंतु पंडित-पुरोहित केवल इसी तरह के भगवान के साथ जी सकते हैं; क्योंकि शैतान तो उनके वजूद को पूरी तरह समाप्त ही कर देगा।

यदि भगवान स्वयं ही अनुपयोगी हो जाए, व्यर्थ हो जाए और मनुष्य ज्ञानी होकर शाश्वत जीवन जिए तो इन सारे पुरोहितों का क्या होगा? सभी धर्मों, चर्चों, मंदिरों और पूजाघरों का क्या होगा? इन लाखों लोगों का क्या होगा जो एक परजीवी की तरह, हर संभव ढंग से मानवता का खून चूस रहे हैं? ये शोषकगण केवल इसी ढंग के परमात्मा के साथ चल सकते हैं। स्वाभाविक रूप से जिसकी शैतान की भांति निंदा होनी चाहिए थी, वह भगवान के रूप में पूजा जा रहा है। और जिसकी भगवान की भांति स्तुति होनी चाहिए थी, वह शैतान के रूप में निंदित है।

सभी पूर्व धारणाएं हटाकर, एक बार जरा गौर से इस कहानी को देखो। इसे अन्य बहुत से पहलुओं से भी समझने की कोशिश करो। यह केवल इसका एक पहलू है, लेकिन यह भी बहुत महत्वपूर्ण है। क्योंकि यदि भगवान शैतान बन गया और शैतान भगवान बन गया, तो फिर मनुष्य का कोई पतन नहीं हुआ। यदि आदम और ईव ने शैतान का बुद्धिमत्तापूर्ण सुझाव नहीं माना होता तो वह पतन कहलाता, तब मनुष्य को बचाने की जरूरत अवश्य पड़ती। परंतु उन्होंने इंकार नहीं किया। सर्प निश्चित ही प्रज्ञावान था, शायद तुम्हारे परमात्मा से भी ज्यादा विवेकपूर्ण।

थोड़ा गौर से अवलोकन करो! इस बात को सब भलीभांति समझते हैं, एक बहुत सामान्य व्यक्ति भी यह जानता है कि यदि बच्चों से कहो कि यह फल कतई मत खाना, तुम घर में उपलब्ध सभी खाद्य-सामग्रियों में से कुछ भी खा सकते हो, परंतु यह फल बिल्कुल नहीं खाना। तब बच्चे समस्त प्रकार के उपलब्ध व्यंजनों में रूचि न लेंगे बल्कि उनका सारा रस उस फल को पाने में होगा जिसे खाने से रोका गया है।

निषेध एक तरह का आमंत्रण है।

इस कहानी का भगवान एकदम मूर्ख लगता है। बगीचा बहुत बड़ा था, वहां लाखों वृक्ष थे। यदि इन दो वृक्षों के बाबत कुछ भी न कहता, तो मुझे नहीं लगता कि मनुष्य आज तक भी इन दो वृक्षों को ढूंढने योग्य हो पाता। परंतु उसने अपना धार्मिक प्रवचन इसी उपदेश से प्रारंभ किया--"इन दो वृक्षों के फल मत खाना।" उसने वृक्षों की तरफ संकेत किया--"यही दो वृक्ष हैं जिनसे तुम्हें बचकर रहना है।" यह एक तरह से उत्तेजित करना, भड़काना है। कौन कहता है कि शैतान ने आदम और ईव को बहकाया? यह भगवान की करामात है! और मैं कहता हूं कि शैतान के बिना फुसलाए भी आदम और ईव ये फल अवश्य ही खाते। शैतान की जरूरत ही नहीं,

भगवान ने स्वयं ही सब काम कर दिया है। आज नहीं तो कल, इस अदृश्य प्रलोभन को रोकना असंभव हो जाता। परमात्मा द्वारा उन्हें क्यों रोका जाना चाहिए था?

लोगों को आज्ञाकारी बनाने के समस्त प्रयास ही उन्हें अवज्ञाकारी बना देते हैं। लोगों को गुलाम बनाने के समस्त प्रयास ही उन्हें विद्रोही व अधिक स्वतंत्र होने पर मजबूर करते हैं। यहां तक कि सिग्मंड फ्रायड भी परमात्मा से अधिक मनोविज्ञान जानता है। सिग्मंड फ्रायड एक यहूदी है, वह आदम और ईव की परंपरा में से ही है। आदम और ईव उसके पूर्वजों के पूर्वजों के भी पूर्वज हैं। कहीं न कहीं फ्रायड में वही खून प्रवाहित हो रहा है। सिग्मंड फ्रायड अधिक बुद्धिमान है। वस्तुतः इस साधारण से तथ्य को देखने के लिए बहुत ज्यादा बुद्धिमानी की आवश्यकता नहीं है।

मेरे बचपन में, मेरे पड़ोस में शहर का सबसे धनी व्यक्ति रहता था। सिर्फ उसके पास ही संगमरमर से सजा हुआ आलीशान मकान था। घर के चारों ओर बहुत सुंदर बगीचा था, उसमें घास का मैदान था। एक दिन मैं उसके बगीचे की चारदीवारी के पास ही खड़ा था और वह अपने माली से कुछ कह रहा था। मैंने उससे कहा, "दादा", उसे सब दादा ही कहते थे, दादा यानि बड़ा भाई; पूरा शहर ही, यहां तक कि जो उससे बड़े थे वे भी उसे दादा ही कहते थे क्योंकि वह बहुत अमीर था। मैंने उनसे कहा, "आप एक चीज याद रखिए, बगीचे के आसपास कुछ पोस्टर लगवा दीजिए कि यहां कोई मूत्र त्याग न करे। क्योंकि मैंने कुछ लोगों को आपके घर की दीवार पर पेशाब करते देखा है।" वह जगह मू़़त्र त्याग के लिए अच्छी थी। काफी बड़ा बगीचा था, बहुत पेड़ थे, उन पेड़ों में आसानी से छुप सकते थे।

उसने कहा, "यह बात बिल्कुल ठीक है।" अगले ही दिन उसने बगीचे की दीवार पर कुछ निर्देश लिखवा दिए--"यहां पेशाब करने की अनुमति नहीं है।" उस दिन से पूरा शहर ही उसके बगीचे की दीवार के आसपास मूत्र त्याग करने लगा। वह मेरे पिता के पास आया और पूछा कि तुम्हारा बेटा कहां है? उसने मेरे घर को नरक बना दिया है। उससे किसने कहा था कि आकर मुझे सलाह दे?

मेरे पिता ने पूछा, उसने आपको कौनसी सलाह दी है? यदि आपने मुझसे पहले पूछा होता तो मैं यही कहता कि उसकी कोई बात मत सुनना। उसकी सलाह हमेशा ही किसी परेशानी की ओर ले जाती है। अब आपके साथ क्या हुआ?

उसने कहा--कुछ नहीं, मैं अपने माली से बात कर रहा था और तभी वह बोला कि दादा, मैंने कुछ लोगों को यहां मूत्र त्यागते देखा है। यद्यपि मैंने खुद ऐसा कुछ नहीं देखा। मेरे माली ने भी कभी ऐसा नहीं देखा। हमने किसी को वहां ऐसी हरकत करते नहीं देखा। परंतु यह सच है कि उसकी बात मुझे ठीक लगी कि इतने बड़े-बड़े पेड़ हैं, झाड़ियां हैं, हो सकता है कि मेरे बगीचे में या आसपास कोई मूत्र त्याग करता हो। मैंने सोचा, अब आगे से ऐसा नहीं होना चाहिए। इसलिए उसके सुझाव पर मैंने कुछ पोस्टर दीवार पर लगवा दिए--"यहां मूत्र त्याग करना मना है।" जैसे ही मैंने पोस्टर लगवाए, बस उस दिन से पूरा शहर ही यहां मेरे बगीचे के आसपास आकर मूत्र त्याग करता है। कहां है तुम्हारा बेटा?

मेरे पिता ने कहा, यह जानना बहुत मुश्किल है कि वह कहां है? वह अपनी मर्जी से आता है, अपनी मर्जी से जाता है। वह हमारे नियंत्रण में नहीं है। पर यदि उसने आपको सलाह देना शुरू किया है तो बिल्कुल चिंता न करें, वह आपको पुनः सलाह देने के लिए जरूर आएगा। अगर उसकी एक सलाह ने कुछ काम किया है, तो वह फिर अवश्य आएगा। आप बस उसका इंतजार कीजिए। यदि वह घर आता है तो मैं स्वयं उसे आप के पास लाऊंगा।

मेरे पिता ने शाम को मुझे देखा और पकड़ लिया, वे बोले-"इधर आओ, तुमने उनको ऐसा सुझाव क्यों दिया? मैंने कहा कि मेरा मकसद तो केवल लोगों को पेशाब करने से प्रतिबंधित करना था। कोई भी ऐसा नहीं कह सकता कि मेरा सुझाव गलत था। मैंने बहुत सी जगहों पर ऐसा निर्देश लिखा हुआ देखा है। हां, यह बात भी

सच है कि उसी जगह मैंने लोगों को मूत्र त्यागते देखा है। वही सब देखकर तो मेरे मन में विचार आया था। और मैंने छानबीन करके पाया कि आखिर क्यों लोग पोस्टर पढ़ने के बावजूद वहां मूत्र त्यागना शुरू कर देते हैं।

लोग कहते हैं-"जब भी हम वह बोर्ड पढ़ते हैं, हमें अचानक ही ऐसा लगता है जैसे मूत्राशय की थैली भरी हुई है और मूत्र त्यागने की तीव्र इच्छा जाग्रत हो जाती है। अन्यथा हम अनेक तरह के अन्य कामों और विचारों से घिरे हुए थे। उस व्यस्तता में मूत्र त्यागने की होश किसे होती है? जब बिल्कुल ही जन्म-मरण का प्रश्न बन जाता है, तब हम इस बारे में सोचते हैं और मूत्र त्यागने जाते हैं। परंतु जैसे ही इस पोस्टर को देखते हैं, तो भरा हुआ मूत्राशय ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण हो जाता है और ऐसा लगता है कि इस मूत्र विसर्जन के लिए यह जगह अच्छी है तभी तो यहां बोर्ड लगा हुआ है। अवश्य, लोग इसी जगह पर मूत्र त्याग करते होंगे। और वहां कई पुराने निशान भी मिल जाते हैं, जहां पहले से ही कई लोग यह कार्य कर चुके हैं। तब लगता है कि बस यह जगह बिल्कुल उपयुक्त है।"

यह बहुत ही साधारण सी बात है कि यदि तुम किसी चीज को रोकते हो, तब तुम उसे भड़का रहे हो, एक चुनौती दे रहे हो। भारत में कहीं भी और किसी भी जगह पर, मूत्र त्यागने में कोई कानूनी समस्या नहीं है। पूरे मुल्क में कहीं भी पेशाब करने की स्वतंत्रता है। जब मैं लगभग दस-ग्यारह साल का था, मेरे पिता बहुत बीमार हो गए। हमें बहुत दूर इंदौर शहर में उन्हें एक अच्छे अस्पताल में ले जाना पड़ा। इंदौर का वह अस्पताल पूरे देश में प्रसिद्ध था। हम वहां लगभग छः महीने तक रहे। अस्पताल के प्रवेशद्वार के पास ही बोर्ड लगा हुआ था--"यहां मूत्र त्यागने की आज्ञा नहीं है। अवज्ञा करने वाले पर मुकद्दमा चलाया जाएगा।" बोर्ड के पास ही एक पुलिसवाला खड़ा रहता था। मेरे अनुसार यह मामला ज्यादा ही भड़काने वाला था। केवल बोर्ड पर्याप्त था परंतु एक पुलिसवाला, वो भी बंदूकधारी!

पहले ही दिन जब मेरे पिता अस्पताल में भर्ती हुए और हमने वहां रहने के लिए कमरा लिया तो मैं स्वयं को रोक नहीं पाया। मुझे खुद को रोकना असंभव पड़ा-बोर्ड काफी है, पर बंदूकधारी पुलिसवाला भी तैनात-कुछ ज्यादा ही सख्त इंतजाम था। मैं सीधे उसी जगह पहुंचा। पुलिसवाला खड़ा था, उसने मेरी तरफ देखा। मैंने वहीं पेशाब कर दिया। उसे विश्वास ही नहीं हुआ क्योंकि आज तक ऐसा कभी नहीं हुआ था। उसने पूछा--"अरे, तुम यह क्या करते हो? क्या नोटिस नहीं पढ़ सकते?" मैंने कहा-"मैं पढ़ सकता हूं और आप से बेहतर पढ़ सकता हूं।" उसने फिर पूछा--"क्या तुम मेरी इस बंदूक को नहीं देख रहे हो?" मैंने कहा--"मैं इस बंदूक को भलीभांति देख रहा हूं। यह सब तुम्हारी बंदूक और इस बोर्ड के कारण हुआ है। अन्यथा इस समय मुझे ऐसी कोई जरूरत न थी। मेरा कमरा यहां से बस दो कदम की दूरी पर है, और मैं कुछ देर पहले ही पेशाब करके आया हूं। मेरा मूत्राशय बिल्कुल खाली है, इसलिए दोबारा पेशाब करना सचमुच कठिन था। परंतु आपके द्वारा दिए इस प्रलोभन की वजह से मैं रुक न सका।"

उसनेकहा--"तुम्हें मेरे साथ अस्पताल के मुख्य प्रबंधक के पास चलना होगा।" वह एक बहुत बड़ा अस्पताल था। मैंने कहा कि ठीक है, मैं चलूंगा। मैं वहां गया, प्रबंधक बहुत ही गुस्से में था, बोला--"तुम आज ही आए हो, और पहले ही दिन तुमने ऐसा काम कर दिया।" मैंने कहा--"परंतु मैं क्या करता? यह पुलिसवाला वहां पेशाब कर रहा था।" वह हैरान होकर बोला--"क्या?" मैंने कहा--"हां! यह पेशाब कर रहा था। और जब एक पुलिसवाला पेशाब कर रहा है, तो मैंने सोचा कि शायद यह कानूनी तौर पर मान्य है और यह बोर्ड वगैरह सब बकवास है।" पुलिसवाला बोला--"कौन कहता है कि मैं पेशाब कर रहा था? यह सरासर गलत है।" प्रबंधक ने कहा--"बड़ी हैरानी की बात है! चलो, जरा वहां चलकर देखते हैं।"

दरअसल मैंने दो जगह पर पेशाब किया था और उसे वही दो जगह मैंने दिखा दीं। प्रबंधक बोला कि पेशाब के निशान तो दो जगह पर हैं। उसने पुलिसवाले से कहा कि तुम्हारी सेवाओं की अब इस अस्पताल को जरूरत नहीं है। और यह भोलाभाला बच्चाझूठा नहीं है। तुम्हें यहां लोगों को रोकने के लिए रखा गया है और तुम खुद ही पेशाब करते हो। मैंने कहा--"मैंने इन्हें बंदूक के साथ ही देखा है, यहां पेशाब करते हुए। मैंने सोचा कि

शायद ऐसा करना ठीक है। क्योंकि मैं तो यहां बिल्कुल नया हूं, मुझे यहां के बारे में कुछ पता भी नहीं है।" पुलिसवाला मेरी बात का विरोध न कर सका। मैंने कहा--"यदि तुम पेशाब नहीं किए तो तुम इंकार करो। यदि तुमने नहीं की तो किसी और ने की होगी। परंतु इसका मतलब यही हुआ कि उस समय तुम वहां मौजूद नहीं थे, अपनी ड्यूटी नहीं कर रहे थे। हर हालत में तुम तो काम से गए।"

उसे नौकरी से निकाल दिया गया। जब हम बाहर आए तो वह बोला--"जरा सुनो, तुमने दूसरी जगह पर कैसे पेशाब किया? तुम जानते हो कि मैंने पेशाब नहीं किया।" मैंने कहा-"मैं जानता हूं, तुम भी जानते हो, पर उससे कोई बात नहीं बनेगी। प्रश्न प्रबंधक का है, वह यह सब कुछ नहीं जानता। तुम किसी भी विधि से फंसोगे ही--या तो तुम ड्यूटी पर नहीं थे और कोई पेशाब कर गया, अथवा ड्यूटी पर थे तो तुमने ही पेशाब की है।"

उसने पूछा--"यह हुआ कैसे? शायद जब हम अंदर गए तब किसी अन्य व्यक्ति ने यह किया हो।"

मैंने कहा--"तुम तो काम से गए। अब तुम वही बंदूकधारी पुलिसवाले नहीं रहे। मुझे तुम से सहानुभूति है। अगर मैं सच्ची बात कहूं, तो मुझे स्वयं ही दोनों काम करने पड़े। तुमने बहुत गौर से नहीं देखा कि मैं वहां दो कदम पर खिसक गया था।"

उसने कहा--"हां, मुझे याद है, तुम थोड़ा खिसके थे और मैंने सोचा भी कि तुम ऐसा क्यों कर रहे हो? अब मुझे पता चला। परंतु वह प्रबंधक बहुत ही सख्त आदमी है, अब तो वह मुझे घर में प्रवेश करने की भी अनुमति नहीं देगा।" मैं बोला--"वह कठोर आदमी होगा, पर अब वह मेरा दोस्त बन चुका है।"

आने वाले छः महीनों तक वह मेरा मित्र बना रहा। मैंने उस अस्पताल में हर तरह का काम किया, पर जब भी मुझे उसके पास ले जाया जाता तो वह कहता-"यह बच्चा भोलाभाला है। पहले ही दिन से मैं इस बच्चे को जानता हूं कि यह बहुत सीधा-सरल और नादान है। लोग बेवजह इसे परेशान करते हैं; कोई भी दिक्कत आए तो इसी बेचारे पर दोषारोपण किया जाता है। कोई अन्य कुछ करता है परंतु इसे फंसाया जाता है। और मैं इसका कारण जानता हूं; यह भोला है, सीधा है, छोटे गांव से आया है। यह बच्चा शहर को, शहर की चालाकियों को और यहां होने वाली सब प्रकार की बदमाशियों के बारे में कुछ नहीं जानता। इसीलिए तुम इसे पकड़ लाते हो। यह बेचारा शिकार बन जाता है, मगर मैं धैर्यपूर्वक इसी की तरफदारी करूंगा।"

उन छः महीनों तक वह मेरा अच्छा मित्र बना रहा। केवल उस एक घटना के कारण ही ऐसा संभव हुआ, जिसमें पुलिसवाले को बाहर निकाला गया था। किंतु मेरे अनुसार वह एक साधारण-सी छेड़खानी का मामला था।

क्या भगवान को यह साधारण-सी बात दिखाई नहीं देती कि वह उन बेचारे आदम और ईव को चुनौती दे रहा था? ईमानदार और निष्कपट आत्माओं में वह भ्रष्टाचार का बीजारोपण कर रहा था। परंतु परमात्मा को बचाने के लिए, पंडितों और पुरोहितों ने सर्प को बीच में लाने का प्रावधान ढूंढ लिया और समस्त जिम्मेदारी सर्प पर डाल दी कि केवल सर्प ही मनुष्य के मूल पतन का एकमात्र कारण है। पर मैं सांप को बुनियादी वजह नहीं मानता। बल्कि वह तो मनुष्य के विकास की मौलिक प्रेरणा बना। वास्तव में शैतान प्रथम विद्रोही है; उसने आदम-ईव से जो कहा, उससे ही सच्चे धर्म की शुरूआत हुई। ईश्वर ने जो कहा, वह मनुष्य की आत्महत्या का प्रारंभ बनता, धर्म का नहीं।

पूर्वी देशों में सर्प को संसार के सर्वाधिक बुद्धिमान प्राणी की तरह पूजा जाता है। और मेरी दृष्टि में यह बात, कहीं बेहतर है। यदि सर्प ने वास्तव में आदम-ईव के साथ कुछ ऐसा किया है तो निश्चित ही वह दुनिया का सबसे बुद्धिमान प्राणी है। उसने मनुष्य को अनन्त गुलामी, अज्ञानता और मूर्खता से बचाया। यह मूल पतन नहीं, वरन मूल उत्थान है।

तुम मुझसे पूछते हो कि मनुष्यता को और अधिक पतन से कैसे बचाया जाए?

मनुष्यता कभी नीचे नहीं गिरी। हां, इतना ही हुआ है कि सारे धार्मिक सिद्धांत वक्त के संग छोटे पड़ गए और मनुष्य पर कब्जा जमाने में विफल रहे। मनुष्य विकास की ओर गतिमान रहा। सिद्धांत विकसित नहीं होते, नीतियां विकसित नहीं होतीं। नीतियां वैसी ही रहती हैं परंतु मनुष्य उन्हें पीछे छोड़कर उनसे ज्यादा विराट हो जाता है। पंडितगण सिद्धांतों और नीतियों से चिपके रहते हैं। लकीर के फकीर होना ही उनकी विरासत है, शक्ति है, परंपरा और प्राचीन ज्ञान है। वे कसकर इनसे चिपके रहते हैं।

अब, मनुष्य के बारे में क्या कहा जाए जो इन सिद्धांतों से ऊपर उठकर विकास की ओर प्रगतिशील है? निश्चित ही, पंडितों के लिए वही निरंतर पतन है। वे कहेंगे कि मनुष्य नीचे गिर रहा है।

कुछ उदाहरणों द्वारा तुम आसानी से समझ पाओगे कि कैसे सिद्धांत और नीतियां सख्त, स्थिर और मृत होने के लिए आबद्ध होती हैं। मनुष्य जीवित है। तुम मनुष्य को किसी ऐसे ढांचे में नहीं बांध सकते जो उसके साथ-साथ विकसित न होता हो। वह सभी कारागृहों को तोड़ देगा। वह सभी जंजीरों को नष्ट कर देगा। उदाहरण के लिए, जैन समुदाय में जैन साधुओं के लिए जूते का प्रयोग वर्जित है। इसका कारण बस यही है कि प्राचीन समय में जूते केवल चमड़े से बनाए जाते थे और चमड़ा पशुओं को मारकर प्राप्त होता था। यह हिंसा का प्रतीक था और महावीर नहीं चाहते थे कि उनके अनुयायी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूप से हिंसा में शामिल हों। उन्होंने सभी को जूते पहनने से मना किया। उन्हें शायद यह नहीं मालूम था कि भविष्य में कभी रबर के जूते भी मिलने लगेंगे। जो हिंसा के कृत्य से नहीं बने होंगे। वे इस बात से अनभिज्ञ थे कि कभी कृत्रिम पदार्थ के जूते भी बनने लगेंगे जो हिंसा से नहीं बनेंगे। कभी कपड़े के जूते भी उपलब्ध होंगे जो हिंसा के द्वारा निर्मित नहीं होंगे। महावीर उस समय इस तथ्य से अनभिज्ञ थे। अतः इस तथ्य से दो बातें पता चलती हैं--पहली बात, जैन समाज का यह दावा कि महावीर अंतर्यामी थे, बिल्कुल गलत प्रतीत होता है। उन्हें तो कृत्रिम चमड़े के बारे में जानकारी ही नहीं थी। इसलिए वे सर्वज्ञ नहीं हो सकते।

दूसरी बात, अब तक पच्चीस सदियां बीत गईं हैं; जैन साधु एवं साध्वियां अभी भी भारत जैसे देश में, गर्मी के मौसम में, बिना जूते पहने धूल भरी, कोलतार की पिघलती सड़कों पर चलते हैं। तुम्हें उनके पांव देखने चाहिए, तुम्हारी आंखों में आंसू आ जाएंगे। उनके पैरों की चमड़ी इस बुरी तरह फट जाती है, जैसे दो-तीन साल तक बारिश न होने पर धरती फट जाती है। उस फटी हुई चमड़ी के घावों में से खून रिसता रहता है। फिर भी उन्हें बिना जूते-चप्पल के चलना पड़ता है। वे गाड़ी का उपयोग नहीं कर सकते हैं क्योंकि उन दिनों में गाड़ी भी घोड़े या बैल के द्वारा खींची जाती थी और यह पशुओं के प्रति हिंसा थी। मैं भलीभांति समझता हूं कि यह पशुओं के प्रति हिंसा है, तुम कौन होते हो कि निर्दोष और निरीह प्राणियों को स्वयं को ढोने के लिए या अपनी गाड़ियां चलाने के लिए मजबूर करो। परंतु महावीर इस तथ्य के प्रति जागरूक नहीं थे कि कभी ऐसी कारें होंगी जो घोड़ों द्वारा नहीं खींची जाएंगी। ऐसी कारें होंगी जिनमें हार्स नहीं बल्कि हार्स के बिना ही हार्स-पॉवर होगी। वे अनभिज्ञ थे कि कभी रेलगाड़ियां होंगी या बिजली से चलने वाले वाहन होंगे। उन्हें यह मालूम नहीं था कि कभी हवाई जहाज होंगे, जिनमें हिंसा की न्यूनतम संभावना होगी।

साधारण रूप से चलने में हम ज्यादा हिंसा करते हैं क्योंकि केवल हाथी जैसे बड़े जीव को मारना ही हिंसा नहीं है। जैन धर्म के अनुसार, आत्मा सब प्राणियों में बराबर है, एक नन्हीं चींटी में भी उतनी ही आत्मा है जितनी एक विशालकाय हाथी में है। केवल शरीर के अनुपात में अंतर है किंतु आत्मा एक ही है। इसलिए जब आप सड़क पर चलते हैं तब आपके द्वारा अनेक जीव मरते हैं। न केवल चलने में, बल्कि हमारी सांस लेते समय भी हवा में मौजूद असंख्य कीटाणु मारे जाते हैं। नाक-मुंह से बाहर आने वाली गर्म हवा मात्र से ही कितने कीटाणु मर जाते हैं। शायद एक जैन साधु और जैन साध्वी के लिए हवाईजहाज सबसे ज्यादा अहिंसक वाहन है।

जब मैंने जैन साधु को हवाईजहाज से यात्रा करने की सलाह दी तो वह बोले--"आप क्या कह रहे हैं? यदि किसी ने सुन लिया तो हम दोनों को निष्कासित कर दिया जाएगा।" मैं केवल एक जैन साधु को इसके लिए राजी कर सका, और सचमुच उन्हें निष्कासित कर दिया गया। वे जरा नासमझ थे। हम दोनों एक ही मंदिर में ठहरे थे। मैंने उनसे कहा--"आप इस जगह से शहर जाने के लिए, बेकार में ही प्रतिदिन दस मील पैदल चलते हैं।

जब मुझे लेने के लिए कार आती ही है तो आप मेरे साथ चल सकते हैं।" वह बोले--"परंतु यदि किसी ने देख लिया?" मैंने कहा कि हम इसके लिए कोई न कोई प्रबंध कर सकते हैं। वे बैठने के लिए हमेशा बांस की चटाई का उपयोग करते थे। इसलिए मैंने कहा--"आप बांस की चटाई को कार की सीट पर रख देना और फिर उस चटाई पर बैठ जाना।"

वे बोले--"उससे क्या होगा?" मैंने कहा--"आप बस इतना बोल दीजिए कि मैं तो अपनी बांस की चटाई पर बैठा हूं। मुझे कार या अन्य किसी भी चीज से कोई लेना देना नहीं है।" वे बोले-"यह बिल्कुल ठीक रहेगा क्योंकि यदि मैं अपनी बांस की चटाई पर बैठा हूं और कोई मेरी चटाई खींचने लगे तो मैं क्या कर सकता हूं!" मैंने उनसे कहा-"बिल्कुल ठीक! आप तो बस अपनी बांस की चटाई पर बैठे रहिए।"

मैं उन्हें कार में उस जगह पर ले गया जहां हमारी मीटिंग थी, उस मीटिंग में उन्हें और मुझे दोनों को ही बोलना था। जब लोगों ने उन्हें कार में बैठे हुए देखा और मैंने किसी से आकर उनकी बांस की चटाई को बाहर निकालने के लिए कहा, जिस के ऊपर वे बैठे हुए थे। तब उन लोगों ने कहा--"यह सब क्या है?" मैंने कहा-"पहले आप उन्हें बाहर निकालें क्योंकि कार के साथ उनका कोई भी लेना देना नहीं है। वे तो केवल अपनी बांस की चटाई पर ही बैठे हैं। मैंने ही उनकी इस बांस की चटाई को कार में रख दिया था, अब उन्हें और उनकी इस चटाई दोनों को बाहर निकालना है।"

मैंने उन सज्जन से पहले ही यह कह रखा था कि आप कुछ मत बोलना, केवल आंख बंद करके चुपचाप बैठे रहना। मैंने वहां उपस्थित सब लोगों से कहा-"यह बहुत ही ध्यानी व्यक्ति हैं, आप उन्हें परेशान न करें, केवल उनकी चटाई बाहर निकाल लें।" उन लोगों ने चटाई तो खींच ली परंतु वे सब बहुत क्रोधित हुए कि यह सब क्या... "हमने आज तक कभी ऐसा नहीं सुना कि एक जैन साधु और कार में बैठकर यात्रा करे। हम सब अच्छी तरह से जानते हैं कि यह कोई ध्यानी साधु नहीं हैं, बल्कि आज पहली बार ही हमने इन्हें आंखे बंद करके बैठते हुए देखा है। यह कोई विद्वान या पंडित वगैरह भी नहीं हैं।"

यह सच है कि वह गिनती के केवल तीन ही भाषण जानते थे और हमेशा कहीं भी जाने से पहले मुझसे पूछते थे कि कौन सा भाषण वहां के लिए ठीक रहेगा? तब मैं एक, दो या तीन का इशारा करता, उससे उनका काम हो जाता। हाथ की जो उंगली मैं सबसे पहल उठाता था वह उसी नंबर का भाषण वहां देते थे। और मैं सदैव उन्हें गलत भाषण देने के लिए उकसा देता था, जो वहां उपस्थित श्रोताओं के अनुकूल नहीं होता था। परंतु वह मेरी उंगली पर निर्भर रहते थे। वे थोड़े नासमझ, बुद्धू थे।

अंततः उन लोगों ने उन्हें निष्कासित कर दिया क्योंकि वे कार में बैठे थे। जब तक मैं वहां रहा, वे कुछ न कर सके क्योंकि मैं उनके पक्ष में यह तर्क देता था--"उनका इस सारी घटना से कुछ लेन-देन नहीं है। आप मुझे निष्कासित कर सकते हैं, पर आप ऐसा भी तो नहीं कर सकते क्योंकि मैं आपका जैनी साधु नहीं हूं। दरअसल मेरा किसी से भी कोई संबंध नहीं है। इस पूरी दुनिया में कोई भी मुझे निष्कासित नहीं कर सकता है। आप चाहें तो मुझे निष्कासित करने का मजा लीजिए। यदि आपका रस केवल और केवल निष्कासन में ही है तो आप निश्चित ही मुझे निष्कासित कर सकते हैं। पर यह व्यक्ति बिल्कुल निर्दोष है।"

इसलिए मेरे सामने वे कुछ न कर सके परंतु जैसे ही मैंने वह स्थान छोड़ा, अगले ही दिन उन सब लोगों ने उन्हें निष्कासित कर दिया। उन्होंने एक जैन साधु होने के समस्त प्रतीक चिह्न उनसे छीन लिए। लगभग पांच या सात साल बीत जाने के बाद मैं उनसे लखनऊ स्टेशन पर मिला और यह एक अद्‌भुत संयोग था कि वह टैक्सी चला रहे थे। वे टैक्सी ड्राईवर बन चुके थे। इस तरह रेलवे स्टेशन पर मैं उनसे दोबारा मिला क्योंकि मुझे लखनऊ उतरकर एक होटल में रुकना था और लगभग आठ घंटों तक अपनी अगली ट्रेन के लिए इंतजार करना था। इस प्रकार लखनऊ में मेरे पास कोई व्यस्तता नहीं थी और मैंने किसी को अपने आने की सूचना भी नहीं दी थी। अतः मैं आठ घंटे तक पूर्ण विश्राम कर सकता था। अचानक ही मैंने एक टैक्सी को आवाज़ दी और वह मेरे सामने आ गए। मैंने कहा-"यह क्या? आप टैक्सी चला रहे हैं?"

वे बोले--"यह सब आपकी ही कारीगरी है।"

मैंने कहा--"मेरे मुताबिक एक कार से दूसरी कार तक पंहुचना और पिछली सीट से अगली सीट पर आ जाना, यह एकदम तर्कसंगत है। यही तो सही मायने में क्रमिक विकास है। उस समय आप कार में बैठने मात्र से ही डरते थे और अब आप खुद कार चला रहे हैं। आप इसे निरंतर जारी रखिए, जल्दी ही आप पायलट बन जाएंगे और किसी दिन मैं आपसे हवाई जहाज में मिलूंगा।"

वे बोले--"मेरे साथ मज़ाक मत करिए। मैं अभी तक आप के प्रति बहुत क्रोध में था परंतु आपको देखते ही मेरा सारा गुस्सा गायब हो गया है। आप एक अच्छे व्यक्ति हैं। पर आप ने मेरे साथ वह सब क्यों किया?" मैंने कहा-"मैंने आपको उस बंधन से मुक्त किया है। अब आप सिनेमा देखने जा सकते हो, सिगरेट पी सकते हो। आप प्रत्येक वह कार्य कर सकते हो जो आप करना चाहते हो।" वे बोले-"हां! मैं कर सकता हूं। यह ठीक है कि आपने मुझे स्वतंत्र कर दिया है। मैं उन लोगों का गुलाम था। यहां तक कि उनकी आज्ञा के बिना मैं हिल भी नहीं सकता था। अब मैं किसी की तनिक भी परवाह नहीं करता। मैं अपनी आजीविका स्वयं कमाता हूं और अपने मनमाने ढंग से जिंदगी व्यतीत करता हूं। यदि आप वहां के अन्य जैन साधुओं की भी मदद कर सकें तो... !"

मैंने कहा--"मैं अपनी तरफ से पूरी कोशिश करता हूं परंतु उनके इर्द-गिर्द सदैव ही उनके अनुयायियों की भीड़ रहती है। वह भीड़ उनकी सुरक्षा करती है और इस बात का ध्यान रखती है कि वे मुझ से बात न कर सकें। उनके अनुसार, मुझसे बात करना भी खतरनाक है क्योंकि मैं जैन साधुओं के दिमाग में कोई नई सूझ-बूझ डाल सकता हूं।"

सभी धर्म सोच-विचार से भयभीत होते हैं, प्रश्न उठाने से डरते हैं, संदेह करने से सकुचाते हैं, अवज्ञा से घबराते हैं और इसी कारण सदियों तक पिछड़े बने रहते हैं। एक साधारण सा कारण कि उस समय कई वैज्ञानिक वस्तुएं उपलब्ध नहीं थीं... चिंतन-मनन की कमी के फलस्वरूप धर्म अंधानुसरण का शिकार हो जाता है। वे लोग जो प्राचीन समय में नियम बना रहे थे, उन्हें अंदाज़ा भी नहीं था कि भविष्य में क्या होने जा रहा है। इसलिए सभी धर्म इस बात से सहमत हैं कि मानवता का निरंतर पतन हो रहा है क्योंकि मनुष्य अपने धर्म-शास्त्रों, सिद्धांतों और मुक्तिदाता मसीहा एवं पैगम्बरों का अनुकरण नहीं कर रहा है।

पर, मुझे नहीं लगता है कि मनुष्य का पतन हो रहा है। वास्तव में, मनुष्य की संवेदनशीलता बढ़ रही है, उसकी बुद्धिमत्ता और आयु बढ़ रही है। प्राचीन परतंत्रता और गुलामी के अनेक तरीकों से मुक्त होने में आज का मनुष्य कहीं अधिक सक्षम है, ज्यादा योग्य है। आज मनुष्य में संदेह उठाने, प्रश्न करने और अपनी जिज्ञासा के बारे में बात करने का साहस है। यह कदापि पतन नहीं है।

यह वास्तविक धर्म के फैलाव की शुरूआत है। जल्दी ही यह एक दावानल बन सकती है, जंगल की आग जैसी फैल सकती है। परंतु पंडितों और पुरोहितों के लिए निश्चित ही यह पतन है। उनके लिए प्रत्येक नूतन चीज पतन है क्योंकि वह उनके पुरातन शास्त्रों के अनुरूप नहीं है।

क्या तुम जानते हो कि भारत में केवल सौ साल पहले तक किसी को भी विदेश जाने की आज्ञा नहीं थी। इसका साधारण सा कारण सिर्फ यह था कि विदेश में तुम ऐसे लोगों से मेलजोल बढ़ा लोगे जिन्हें मनुष्यों की तरह स्वीकार नहीं किया जा सकता। वे लोग मानव-तल से नीचे की श्रेणी में आते हैं। भारत में निम्नतम वर्ग के लोगों को अछूत कहा जाता है। उन्हें कोई छू भी नहीं सकता। यदि तुम उन्हें छू लेते हो तो तुम्हें स्नान करना होगा और स्वयं को शुद्ध करना होगा। विदेशों के लोग शायद इन अछूतों से भी निम्न कोटि के हैं। उनके लिए एक विशेष शब्द प्रयुक्त किया जाता है-"मलेच्छ"! इस शब्द का अनुवाद करना बहुत मुश्किल है। इसका अर्थ होता है कुछ ऐसा जो बहुत कुरूप हो, असभ्य हो, घृणित हो और इतना दूषित हो कि उसे देखते ही तुम्हें मितली आने लगे। मलेच्छ शब्द का पूरा और सही अर्थ यही होगा कि ऐसे लोग जिनके संपर्क में आने से तुम्हें उबकाई आने लगे, वमन हो जाए।

यहां तक कि जब गांधी जी उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैंड गए थे तब उनकी मां ने उनसे तीन प्रतिज्ञा ली थीं। पहली, वे किसी भी पराई स्त्री की तरफ वासना भरी नजरों से नहीं देखेंगे, जो बहुत ही दुष्कर कार्य है क्योंकि जैसे ही आपको मालूम चलेगा कि आप वासना भरी नजरों से देख रहे हैं, तब तक तो आप देख ही चुके होंगे। मुझे नहीं लगता कि गांधी जी ने इस प्रतिज्ञा का पालन किया होगा, वे कर ही नहीं सकते, इसका पालन कर

पाना असंभव है। यद्यपि उन्होंने अपनी तरफ से हर संभव प्रयास किया। दूसरी, उन्हें मांस नहीं खाना चाहिए। गांधी जी ऐसी विकट समस्या से घिर गए--क्योंकि आज लंदन में आपको शाकाहारी भोजनालय मिल सकते हैं, आज वहां स्वास्थ्यवर्द्धक भोजन सामग्री उपलब्ध है परंतु जब गांधी जी शिक्षा ग्रहण करने के लिए गए थे उस समय शाकाहारी भोजन आसानी से प्राप्त नहीं होता था। उन्हें केवल फल, ब्रेड, मक्खन और दूध आदि से ही गुजारा करना पड़ा था। वे करीब-करीब भूखों मर रहे थे। वे लोगों के साथ मिलजुल नहीं सकते थे क्योंकि वे सब लोग "मलेच्छ" थे और महिलाओं से मिलते हुए वे स्वयं इतना डरते थे कि क्या पता... कब एक ठंडी हवा के झोंके की तरह वासना उनकी नजरों में उतर जाए? वासना कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो आपके दरवाजे पर पहले से दस्तक दे और कहे कि मैं आ रही हूं। तुम एक सुंदर स्त्री को देखते हो और अचानक महसूस करते हो कि वह बहुत सुंदर है--और इतना काफी है! केवल इतना सोचना ही कि वह सुंदर है, इस बात की सूचना देता है कि तुमने उसे वासना भरी नजरों से देख लिया है। अन्यथा इस बात से क्या लेना देना है और तुम क्यों निर्णय कर रहे हो कि वह सुंदर है या कुरूप है? वास्तव में, यदि तुम अपने निर्णयों को बहुत गहराई से देखो तो जिस क्षण तुम कहते हो कि कोई सुंदर है, उसी क्षण, बहुत गहरे में, तुम उसे पाने की चाहत से भरे हो। जब तुम कहते हो कि कोई कुरूप है, तब बहुत गहरे में तुम्हें उस व्यक्ति से कोई भी सरोकार नहीं है, तुम उससे संबंधित नहीं होना चाहते। तुम्हारी "सुंदरता" और "कुरूपता" की परिभाषा असल में किसी के पक्ष या विपक्ष में तुम्हारी अपनी ही वासना की द्योतक है। अतः गांधी जी सदैव महिलाओं से डरते रहे। वे अपने कमरे तक ही सीमित रहते थे क्योंकि यूरोप में सभी जगह महिलाओं की उपस्थिति थी और उन सब से कैसे दूर रहा जा सकता था?

तीसरी प्रतिज्ञा थी कि वे अपना धर्म परिवर्तन नहीं करेंगे।

पहली समस्या अलैक्जेंड्रिया (मिस्र के एक मुख्य शहर) में शुरू हुई। उनके जहाज को उस जगह पर माल उतारने और चढ़ाने के लिए तीन दिन तक इंतजार करना था। उस जहाज पर उपस्थित जितने भी भारतीय लोग थे वे गांधी जी के मित्र बन चुके थे। उन्होंने सहज भाव से गांधी जी से कहा--"यहां तीन दिन तक अंदर बैठे रहने का क्या औचित्य है? अलैक्जेंड्रिया में रातें बहुत सुंदर होती हैं।" पर गांधी जी को इस बात का अर्थ समझ में नहीं आया--"अलैक्जेंड्रिया में रातें सुंदर होती हैं"... इन सब मामलों में वे जरा नासमझ थे। उन्होंने सुप्रसिद्ध पुस्तक "अरेबियन नाईट्स" का कभी नाम तक नहीं सुना था, अन्यथा वे इस बात को थोड़ा बहुत समझ ही जाते। अलैक्जेंड्रिया अरब के बिल्कुल पास है, इसलिए वहां की रातें अरब की रातों जैसी होती हैं।

गांधी जी ने कहा कि ठीक है, यदि रातें बहुत सुंदर होती हैं तो मैं भी आप लोगों के साथ आ रहा हूं। पर वे यह नहीं जानते थे कि वे कहां जा रहे हैं? वे सब लोग उन्हें एक बहुत ही भव्य मकान में ले गए। वहां गांधी जी ने पूछा-"परंतु हम कहां जा रहे हैं?" उनके मित्रों ने कहा-"सुंदर रातों की ओर"! और वह भवन एक वेश्यालय था। गांधी जी एकदम स्तब्ध रह गए और उनकी जबान जैसे बंद हो गई। वे इतना भी नहीं कह पा रहे थे कि मैं अंदर नहीं जाना चाहता हूं। वे इतना भी नहीं बोल पाए कि मैं वापिस जहाज पर जाना चाहता हूं। इसके दो कारण हैं--पहला, "यह सब लोग सोचेंगे कि मैं नपुंसक हूं" और दूसरा, वे उस समय बोलने योग्य नहीं थे, जीवन में पहली बार उन्हें ऐसा लगा कि उनका गला रूंध गया है, जाम हो गया है। उन सब लोगों ने जबरदस्ती उन्हें खींचा। वे लोग बोले-"यह नए हैं, चिंता करने की आवश्यकता नहीं है।"और वे उन लोगों के साथ चले गए। उन लोगों ने उन्हें भी एक वेश्या के कमरे में धकेल दिया और दरवाजा बंद कर दिया।

पसीने से तर, कांपते हुए गांधी जी को देखकर वेश्या भी कुछ परेशान हुई। वह बिल्कुल ही भूल गई कि वे केवल एक ग्राहक हैं। उस वेश्या ने उन्हें बिठाया, वे उसके पलंग पर नहीं बैठ रहे थे परंतु उसने आग्रहपूर्वक उन्हें बिठाया। वह बोली-"आप ठीक से खड़े होने की स्थिति में नहीं हैं, आप नीचे गिर जाएंगे, आप बहुत ज्यादा कांप रहे हैं। आप पहले बैठ जाइए।"वे इतना भी नहीं कह सके कि वे एक वेश्या के पलंग पर बैठना नहीं चाहते हैं। "मेरी मां क्या कहेगी? मैंने तो अभी तक उसकी तरफ देखा नहीं है।"भीतर ही भीतर, मन ही मन वे अपनी मां से बातचीत कर रहे थे। "मैंने अभी तक उसकी तरफ वासना की दृष्टि से नहीं देखा है। यह केवल एक दुर्घटना है,

ये सब बेवकूफ और मंदबुद्धि लोग जबरदस्ती मुझे यहां ले आए हैं।" वह महिला समझ गई कि इन्हें यहां जबरदस्ती लाया गया है। वह बोली, "बिल्कुल चिंता मत करें, मैं भी एक इंसान हूं, मुझे बताइए कि आप क्या चाहते हैं? मैं आपकी मदद करूंगी।" परंतु वे कुछ भी न कह सके।

वह महिला बोली, "यह तो बहुत ही मुश्किल है, ऐसे कैसे... ! आप बोल नहीं रहे हैं।"

गांधी जी बोले--"मैं... बस..."

वह बोली, "कृपया आप लिख कर दीजिए।"

उन्हें कागज पर लिखा-"मुझे यहां पर आने के लिए बाध्य किया गया है। मैं बस यहां से जाना चाहता हूं और आपको मैं अपनी बहन की तरह ही देखता हूं।"

वह बोली, "अच्छा, ठीक है, आप चिंता मत करें।" उस महिला ने दरवाजा खोला और कहा-"क्या आपके पास जहाज पर वापिस जाने के लिए पैसे हैं या मुझे आपकी मदद के लिए आपके साथ आना चाहिए? क्योंकि अलैक्जेंड्रिया में आधी रात का यह समय बेहद खतरनाक है।"वे बोले-"नहीं"। उस वेश्या को देखने के बाद कि वह कोई खतरनाक जीव जैसी नहीं है, अब वह ठीक से बात करने लायक हो गए थे। आज तक वह जितनी भी महिलाओं से मिले थे, उन सब में से उस वेश्या ने उनके साथ अधिक मानवता का व्यवहार किया। उसने उन्हें भोजन दिया, पर गांधी जी बोले, "नहीं, मैं नहीं खा सकता, मैं ठीक हूं।" उसने उन्हें पानी दिया परंतु एक वेश्या के घर का पानी उन्होंने नहीं पिया... जैसे कि पानी भी वेश्या के घर में होने के कारण दूषित हो गया था। भारत में ऐसा ही माना जाता है। भारत के रेलवे स्टेशनों पर तुम लोगों को चिल्लाते हुए पाओगे--"हिंदु पानी"! "मुस्लिम पानी"! पानी का भी संप्रदाय होता है? निश्चित ही कोई जैन व्यक्ति इस हिंदु या मुस्लिम पानी को नहीं पिएगा; वे अपना स्वयं का पानी साथ लेकर चलेंगे, जैन पानी; क्योंकि जैन बहुत ही अल्पसंख्यक हैं इसलिए संभव है कि स्टेशन पर जैन पानी न मिले। इसलिए उन्हें अपना पानी स्वयं ही लेकर चलना पड़ता है।

गांधी जी ने उस महिला को धन्यवाद दिया और अपनी आत्मकथा में उन्होंने उस महिला और उस पूरी घटना के बारे में लिखा-"मैं कितना डरा हुआ था कि मैं बोल भी नहीं पा रहा था, यहां तक कि मैं "ना" भी ना कह सका।"

इन तीन प्रतिज्ञाओं ने इंग्लैंड में उन्हें गुलाम बनाए रखा, अन्यथा वे वहां पूर्ण स्वतंत्र होकर जी सकते थे। वे जीवन के अनेक ऐसे आयामों से परिचित हो सकते थे जो भारत में सुलभता से उपलब्ध नहीं थे, परंतु यह असंभव था क्योंकि तीन प्रतिज्ञाएं ही मुख्य बाधा थीं। उन्होंने मित्र नहीं बनाए, वे सामाजिक सभाओं या धर्म सभाओं में नहीं गए। वे केवल अपनी पुस्तकों के साथ ही सीमित रहे और यह प्रार्थना करते रहे--"किसी तरह मेरा यह कोर्स समाप्त हो जाए तो मैं वापिस भारत जा सकूं।"

इस प्रकार का व्यक्ति एक महान कानूनी विशेषज्ञ नहीं बन सकता। उनका परीक्षा परिणाम बेहतर था, वे अच्छे अंकों से पास हुए। परंतु जब वे भारत आए और उनके पहले ही केस के लिए वे कचहरी गए तो वहां फिर से उनके साथ वही घटना घटी जो उस वेश्या के घर में घटी थी। वे केवल इतना ही बोल पाए-"माय लॉर्ड" और बस... यही आरंभ और अंत था। लोगों ने कुछ देर इंतजार किया, दोबारा उन्होंने यही कहा, "माय लॉर्ड"... वे इतनी बुरी तरह कांप रहे थे कि जज को कहना पड़ा-"इन्हें ले जाएं और कुछ देर आराम करने दें।"यह गांधी जी का भारत में, भारतीय कोर्ट में पहला और आखिरी केस था। उसके बाद उन्होंने कोई केस लेने की हिम्मत नहीं की क्योंकि "माय लॉर्ड" कहते ही उनके अटक जाने की संभावना थी। इसकी मुख्य वजह बस यही थी कि उनके पास लोगों से मिलने और वार्तालाप करने का अनुभव नहीं था। वे लगभग एक साधु की तरह अकेले और अलग-थलग से जिये थे, मानो वे दूर दराज के किसी मठ में रहे हों।

फिर उन्हें मुंबई लाया गया, जहां वे किसी भी तरह से सहज और निश्चिन्त नहीं थे। और यह व्यक्ति एक दिन पूरे विश्व का महान नेता बन जाता है। इस दुनिया में चीजें बहुत ही अद्‌भुत तरीके से काम करती हैं। गांधी कोर्ट नहीं जा सके, इसलिए उन्होंने एक मित्रवतमुस्लिम परिवार का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। उस परिवार का दक्षिण अफ्रीका में अच्छा व्यापार था और उन्हें एक कानूनी सलाहकार की आवश्यकता थी। उन्हें वहां कोर्ट

में नहीं जाना था, केवल भारत और दक्षिण अफ्रीका में उस व्यापार की स्थिति को समझने में वहां के वकील की मदद करनी थी और उसे कानूनी सलाह देनी थी। इस तरह वे वकील के सहायक के रूप में वहां काम करने लगे। उन्हें स्वयं कोर्ट नहीं जाना पड़ता था। अतः इसी कारण से वे अफ्रीका गए, परंतु बीच रास्ते में ही दो दुर्घटनाएं हो गईं जिन्होंने न केवल गांधी की जिंदगी बल्कि पूरे भारत का इतिहास बदल कर रख दिया, यहां तक कि इन घटनाओं का असर संपूर्ण विश्व पर भी पड़ा।

पहली घटना थी कि भारत से जाते समय जो मित्र उन्हें जहाज पर विदा करने के लिए गए थे, उन्होंने जॉन रस्किन की एक पुस्तक "अनटू दिस लास्ट" उन्हें उपहार में दी। इस पुस्तक ने उनका पूरा जीवन ही रूपांतरित कर दिया। यह बहुत ही छोटी सी और साधारण सी पुस्तक है, यह पुस्तक दावा करती है-"अनटू दिस लास्ट" अर्थात"बेचारा, गरीब एवंअंतिम व्यक्ति।" हमें पिछड़े और गरीब व्यक्ति की मदद सबसे पहले करनी चाहिए। और यही उनके संपूर्ण जीवन का दर्शन बन गया कि पिछड़े व दरिद्र व्यक्ति की सहायता सबसे पहले होनी चाहिए।

दक्षिण अफ्रीका में जब गांधी रेलगाड़ी के पहले दर्जे के डिब्बे में यात्रा कर रहे थे, एक अंग्रेज आया और बोला-"तुम यहां से बाहर निकल जाओ क्योंकि कोई भी भारतीय पहले दर्जे के डिब्बे में यात्रा नहीं कर सकता है।"गांधी ने कहा-"परंतु मेरे पास पहले दर्जे का टिकट है, प्रश्न यह नहीं है कि मैं भारतीय हूं या यूरोपीय हूं; सवाल यह है कि मेरे पास पहले दर्जे का टिकट है या नहीं है? लिखित रूप से कहीं भी कुछ ऐसा उपलब्ध नहीं है कि कौन-कौन यात्रा कर सकता है? जिसके पास भी पहले दर्जे का टिकट है, वह यात्रा कर सकता है।"पर वह अंग्रेज सुनने को राजी नहीं था। उसने आपात्कालीन स्थिति में उपयोग की जाने वाली जंजीर खींची और गांधी का सामान बाहर फेंक दिया। गांधी एक दुबले-पतले, कमजोर व्यक्ति थे; अंग्रेज ने उन्हें भी धक्का देकर बाहर प्लेटफार्म पर उतार दिया और बोला-"अब करो तुम यात्रा पहले दर्जे में!"पूरी रात गांधी उस छोटे से स्टेशन के प्लेटफार्म पर पड़े रहे। स्टेशन मास्टर ने उनसे कहा-"तुमने व्यर्थ में ही परेशानी मोल ले ली; तुम्हें चुपचाप नीचे उतर जाना चाहिए था। तुम यहां नए लगते हो? भारतीय पहले दर्जे में यात्रा नहीं कर सकते हैं। ऐसा कोई कानून नहीं है, पर यहांऐसा ही चलता है।"परंतु वह सारी रात गांधी ने एक अजीब सी हलचल में बिताई। गांधी के भीतर ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति विद्रोह का बीज इसी घटना से पड़ा। उसी रात उन्होंने निर्णय ले लिया था कि इस साम्राज्य का अंत होकररहेगा। गांधी बहुत वर्षों तक अफ्रीका में रहे और वहां उन्होंने अहिंसा द्वारा अपनी लड़ाई लड़ने की संपूर्ण कला सीख ली। जब वे 1920 में भारत आए तब अहिंसक क्रांति के कुशल नायक बन गए और केवल अपनी परंपरागत, रूढ़िवादी और धार्मिक छवि के कारण जल्दी ही उन्होंने पूरे देश के मन पर आधिपत्य कर लिया। कोई भी यह नहीं कह सकता था कि वह संत नहीं हैं क्योंकि वह पांच हजार साल पुराने नियमों का पालन कर रहे थे, जो अति-प्राचीन काल में निर्मित किए गए थे।

वास्तव में, वे यह सलाह भी देते थे कि हमें घड़ी को अतीत की ओर मोड़ देना चाहिए औरमनु-काल में, पांच हजार वर्ष पूर्व के वक्त में वापिस लौट जाना चाहिए। उनके लिए चरखा ही एकमात्र महानतम और नवीनतम अविष्कार था। चरखे के बाद... विज्ञान गायब! विज्ञान का काम चरखे के साथ ही पूरा हो चुका था। निश्चित ही वे उन लोगों के नेता बने जो आधुनिक और सम-सामायिक नहीं थे।

तुम मुझसे पूछते हो कि मानवता को कैसे बचाया जाए? पर किससे बचाया जाए? मैं यही कहूंगा कि मानवता को महात्मा गांधी और उनके जैसे ही अन्य लोगों से बचाया जाए।

हां, मानवता को बचाओ।

मानवता को बचाओ... पोप से, पादरियों से, शंकराचार्यों से, ईमामों से।

मानवता को बचाओ... जीसस क्राइस्ट से, महावीर से, गौतम बुद्ध से।

बचाओ मानवता को। पर मैं जानता हूं कि तुम्हारा प्रश्न मानवता को जीसस से बचाने के बाबत नहीं है। तुम बिल्कुल इसका विपरीत पूछ रहे हो। तुम मुझसे पूछ रहे हो कि कैसे मानवता को जीसस क्राइस्ट "के लिए"

बचाया जाए न कि जीसस क्राइस्ट से। पर क्यों? क्या तुमने कभी सोचने की कोशिश की है-"क्या तुम सुरक्षित हो?"क्या तुम ऐसा दावे के साथ कह सकते हो कि तुम उस बिंदु पर आ पंहुचे हो जिसके आगे विकास की कोई गुंजाइश नहीं है? क्या तुम कह सकते हो कि तुम नितान्त संतुष्ट हो, तृप्त हो और तुम्हें एक क्षण भी और जीने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि तुम्हारे लायक कुछ नया बचा ही नहीं है? क्या तुम समस्त चिंता, मानसिक वेदना, दुख, कष्ट, क्रोध और ईर्ष्या से सुरक्षित हो? क्या तुम अपने ही अहंकार से अपना बचाव कर सकते हो? यदि तुम अपने आसपास मौजूद, इस तरह के समस्त कूड़ा-करकट से और अपने भीतर भरे हुए विष से सुरक्षित नहीं हो तब तुम यह पूछने की हिम्मत कैसे जुटा रहे हो कि मानवता को कैसे बचाया जाए?

हम मानवता को बचाने वाले कौन होते हैं? किस अधिकार से हम मनुष्यता को बचाएं? मैं स्वयं को एक रक्षक की तरह, एक मसीहा की तरह नहीं सोच पाता हूं क्योंकि ये सब अहंकार के खेल हैं। मैं कौन होता हूं तुम्हें बचाने वाला? अगर मैं स्वयं को बचा सकता हूं तो मेरे लिए यही पर्याप्त होगा। परंतु यह दुनिया अद्‌भुत है। लोग खुद को हर तरह की गंदगी में डुबो रहे हैं और खुद ही चिल्ला रहे हैं-"मानवता को बचाओ!"

किस से बचाएं?

तुमसे बचाएं?

इसे मनोवैज्ञानिक ढंग से समझा जा सकता है। मुक्ति दिलाना, बचाना, मदद करना, सेवा करना आदि; तुम ये सारे महान कार्य केवल एक ही मकसद के लिए शुरू करते हो--स्वयं से बचने के लिए। तुम अपना स्वयं का सामना नहीं करना चाहते। तुम देखना ही नहीं चाहते कि तुम कहां हो, तुम क्या हो? इसलिए सबसे अच्छा रास्ता यही है कि इंसानियत को बचाना शुरू करो, इससे तुम बहुत जटिलतापूर्वक व्यस्त हो जाओगे। तुम स्वयं के खालीपन को भूलकर कुछ भरा हुआ महसूस करोगे क्योंकि अब तुम एक महान लक्ष्य की चिंता में संलग्न हो। ऐसा करने से तुम्हें अपनी स्वयं की समस्या नगण्य लगने लगेगी। शायद, तुम अपनी समस्याओं को भूल ही जाओ। यह एक मनोवैज्ञानिक तरीका है, परंतु बहुत विषाक्त है। किसी भी प्रकार से बस तुम स्वयं से बहुत दूर निकल जाना चाहते हो। जितना संभव है उतनी दूर निकल जाना चाहते हो, इतनी दूर कि दर्द और चोट देने वाले अपने ही घाव तुम्हें नजर न आएं। इसलिए सर्वोत्तम मार्ग यही है कि समाज-सेवा में लगे रहो।

मैं अक्सर रोटरी क्लब में बोलने के लिए जाता था और वहां मेज पर उनका "मोटो"लिखा होता था-"हम सेवा करते हैं।"उनका यह शीर्ष-वाक्य मुझे उकसाने के लिए पर्याप्त था-"यह क्या निरर्थक बात है? आप किसकी सेवा करते हैं और आपको सेवा क्यों करनी चाहिए? आप कौन होते हैं सेवा करने वाले?"परंतु विश्व भर के रोटरी क्लब के सदस्य सेवा में विश्वास करते हैं। बस, केवल विश्वास करते हैं और कभी-कभार वे छोटी-मोटी सेवा कर भी देते हैं, वे सब बहुत चालाक हैं। रोटरी क्लब के लोग आपके घर की समस्त बची हुई दवाओं को इकट्ठा करते हैं, जो आपके उपयोग की नहीं हैं क्योंकि बीमार व्यक्ति अब बीमार नहीं है, वह ठीक हो चुका है। दवा की आधी शीशी बची है, आप इसका क्या करेंगे? तो फिर कुछ ऐसा काम जरूर करना चाहिए जिससे परलोक में, स्वर्ग में आपका खाता खुल जाए। इसका बेहतरीन उपाय यही है कि वह आधी दवा की शीशी रोटरी क्लब को दे दीजिए! इसमें आपका कुछ भी नुकसान नहीं हो रहा है, वैसे भी आप इस शीशी को फेंकने ही वाले थे। आप घर में रखी दवाईयों, गोलियों, इंजेक्शन और अन्य बची हुई सामग्री का क्या करते? अतः आप इसे रोटरी क्लब को दे दीजिए। शहर के जाने-माने व प्रतिष्ठित लोग रोटरी क्लब के सदस्य होते हैं, वे गणमान्य लोग ही प्रत्येक घर से बची हुई दवाएं एकत्रित करते हैं। रोटरी क्लब का सदस्य होना, एक "रोटेरियन" होना बड़े ही गौरव की बात है क्योंकि केवल किन्हींखास व्यवसायों के उच्च पदासीन व्यक्ति ही इसके सदस्य हो सकते हैं--केवल प्रोफेसर, डॉक्टर, इंजीनियर, मैनेजर ही रोटेरियन होंगे-प्रत्येक व्यवसाय में से केवल एक।

अतः ऐसे डॉक्टर जो रोटेरियन हैं वे गरीब लोगों में दवाईयां बांट देंगे। कैसी महान सेवा! वैसे यह डॉक्टर फीस भी लेते हैं क्योंकि उन बची हुई दवाईयों के बड़े से ढेर में से वह उपयोगी दवाईयों की छंटनी करते हैं। एक रोटेरियन डॉक्टर महान काम कर रहा है क्योंकि कम से कम वह अपने कीमती समय में से कुछ समय उन बची हुई दवाईयों के ढेर को खंगालने के लिए दे रहा है। "हम सेवा करते हैं"-वह भीतर बहुत ही महान अनुभव करता है; मानो कुछ अत्यंत महत्वपूर्ण काम कर रहा है।

एक व्यक्ति ने भारत में आदिवासी बच्चों के लिए स्कूल खोलने में अपना पूरा जीवन लगा दिया है। वह गांधी का अनुयायी है। अचानक ही, संयोग से वह एक बार मुझसे मिला क्योंकि मैं आदिवासी इलाके में गया था। मैं प्रत्येक दृष्टिकोण से उन आदिवासियों का अध्ययन कर रहा था क्योंकि वे लोग उस काल के जीवित उदाहरण हैं जब मानव तथाकथित नैतिकता, धर्म, सभ्यता, संस्कृति, शिष्टाचार और रीति-रिवाज से इतना अधिक बोझिल नहीं था। वे आदिवासी आज भी साधारण, भोलेभाले, मौलिक और निर्मल लोग हैं। यह व्यक्ति अलग-अलग शहरों में जाता था और धन एकत्रित करता था ताकि स्कूल खोले जा सकें और शिक्षकों का प्रबंध किया जा सके। उसकी इसी प्रक्रिया के दौरान वह अचानक मुझसे मिला। मैंने कहा-"आप क्या कर रहे हैं? आप को लगता है कि आप इन आदिवासियों के लिए कोई बहुत बड़ा काम कर रहे हैं?"बहुत अभिमानपूर्वक वह बोला-"निश्चित ही!"मैंने कहा-"आपको पता भी नहीं है कि आप क्या कर रहे हैं? आप जो स्कूल खोलेंगे, उससे कहीं बेहतर स्कूल सब शहरों में मौजूद हैं। इन सब स्कूलों ने आज तक मनुष्यों की कौन सी मदद की है? यदि ये सब आलीशान और सुविधाजनक स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय मानवता की मदद नहीं कर पाए, तो आप क्या सोचते हैं--आपका छोटा सा स्कूल इन आदिवासियों की कोईसहायता कर पाएगा? आप बस इतना ही करेंगे कि जो आदिम निर्मलता और नैसर्गिकता उनमें बची है, आप उसे भी नष्ट कर देंगे। ये आदिवासी अभी तकसभ्यता के बोझ से मुक्त हैं। आपके बनाए हुए स्कूल कुछ नहीं करेंगे बल्कि उनके लिए परेशानी पैदा करेंगे।"

वह व्यक्ति स्तब्ध रह गया। परंतु कुछ पल इंतजार करके बोला-"शायद आप सही हैं, क्योंकि एक बार मेरे मन में भी यह विचार आया था कि पूरे विश्व में दूर-दूर तक फैले हुए, वृहतऔर व्यापक स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालयों के सामने मेरा यह छोटा सा स्कूल क्या कर पाएगा? परंतु फिर मैंने सोचा कि यह तो गांधी जी का मेरे लिए आदेश था कि आदिवासी इलाकों में जाओ और स्कूल खोलो, इसलिए मैं केवल अपने गुरू की आज्ञा का पालन कर रहा हूं।"

मैंने कहा-"यदि तुम्हारा गुरू नासमझ है तो इसका मतलब यह नहीं है कि तुम उसका आदेश मानना जारी रखो। अब यह सब समाप्त करो! मैं तुम्हें आदेश देता हूं। मैं तुम्हें बताता हूं कि तुम यह सब क्यों करते रहते हो? केवल अपनी पीड़ा से बचने के लिए, अपने कष्ट से मुंह छिपाने के लिए। कोई भी तुम्हारे चेहरे को देखकर बता सकता है कि तुम एक दयनीय और असहाय व्यक्ति हो। तुमने कभी किसी से प्रेम नहीं किया है, तुम्हें कभी किसी से प्रेम नहीं मिला है।"वह बोला-"आपने यह सब कैसे पता लगा लिया? क्योंकि यह बिल्कुल ठीक है। मैं एक अनाथ था, किसी ने मुझे प्रेम नहीं किया और गांधी जी के आश्रम में ही मेरा पालन-पोषण हुआ है। वहां प्रेम की चर्चा हम केवल प्रार्थना के दौरान ही करते थे, अन्यथा प्रेम का गुण वहां जिंदगी में कतईनहीं था। वहां बहुत ही सख्त अनुशासन था, जैसा किसी सैन्य-संगठन में होता है। इसलिए कभी किसी ने मुझे प्रेम नहीं किया, यह ठीक है और आप सही कहते हैं कि मैंने भी कभी किसी से प्रेम नहीं किया है क्योंकि गांधी जी के आश्रम में यह असंभव था कि कोई किसी से प्रेम करे। वहां प्रेम करना एक बहुत बड़ा अपराध था। जिन लोगों की गांधी जी प्रशंसा करते थे, मैं उनमें से एक था। मैं कभी भी उनकी नजरों में निंदनीय नहीं रहा। यहां तक कि उनके अपने पुत्र ने उन्हें धोखा दिया। उनका पुत्र, राजगोपालाचार्य की पुत्री के प्रेम में पड़ गया था, इसलिए उसे आश्रम से निकाल दिया गया था। बाद में उसने उस लड़की से शादी भी कर ली। गांधी जी का अपना निजी सहायक, प्यारेलाल, वह भी एक स्त्री के प्रेम में पड़ गया और उसने कई वर्षों तक इस प्रेम संबंध को सबसे छुपाकर रखा। जब इसका भेद में आश्रम में उजागर हुआ तो यह एक भयंकर और कलंकपूर्ण कृत्य कहलाया!"

मैंने कहा-"यह कैसी निरर्थक बात है! गांधी जी के निजी सहायक की यह दुर्गति! इसका मतलब, बाकी लोगों के बारे में अब क्या खाक पूछें!"

इस आदमी की वहां खूब प्रशंसा हुई क्योंकि वह कभी किसी स्त्री के संपर्क में नहीं आया। गांधी ने उसे आदिवासी इलाकों में भेज दिया और बेचारा वही करता रहा जो उसके गुरू ने आदेश दिया था।

लेकिन उसने मुझसे कहा-"आप ने मुझे विचलित कर दिया है। शायद यह ठीक ही हो कि मैं केवल स्वयं से, अपने घावों से और अपनी ही मानसिक वेदना से बचने की कोशिश कर रहा हूं।"

अतः वे लोग जो मानवता को बचाने में उत्सुक होते हैं, पहली बात तो यह है कि वे सब बहुत अहंकारी होते हैं। वे स्वयं को मुक्तिदाता की तरह देखते हैं। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि वे अत्यंत रुग्ण और व्याकुल प्रवृत्ति के होते हैं। वे अपनी परेशानी एवं मानसिक रुग्णता को भुलाने का प्रयत्न कर रहे हैं। तीसरी बात यह है कि ऐसे लोग जो भी करेंगे, उससे मनुष्य की हालत पहले से भी बदतर हो जाती है क्योंकि ये लोग बेचैन हैं, अंधे हैं और लोगों पर मालकियत करनाऔर समाज का नेतृत्व करना चाहते हैं। जब अंधे नेतृत्व करें तबआज नहीं तो कल, समस्त मानव जाति खाई में गिरने वाली है।

नहीं, मैं किसी को बचाने में उत्सुक नहीं हूं। वास्तव में, किसी को भी बचाव की आवश्यकता नहीं है। हर व्यक्ति जैसा है, वैसा ही बिल्कुल ठीक है। हर व्यक्ति अपने स्वयं के चुनाव से ही वैसा है। मैं कौन होता हूं उसे सताने वाला? मैं जो भी संभव कार्य कर सकता हूं वह यही है कि मैं अपने बारे में बात कर सकता हूं कि मुझे क्या हुआ है। मैं अपनी कहानी कह सकता हूं। शायद मेरी कहानी से किसी को कोई प्रेरणा या दिशा मिल जाए, नई संभावना का द्वार खुल जाए। पर मैं कुछ कर नहीं रहा हूं, केवल स्वयं का अनुभव साझा कर रहा हूं। यह सेवा नहीं है। मैं इसका आनंद ले रहा हूं अतः यह सेवा नहीं है। याद रहे, समाज-सेवक के लिए उदासी और गंभीरता अनिवार्य हैं क्योंकि वह कुछ महान काम कर रहा है। उसने अपने कंधों पर हिमालय उठा रखा है, पूरी दुनिया का बोझ उसके सिर पर है। मैंने कोई भार नहीं उठा रखा है--जगत का या किसी भी व्यक्ति का। और मैं कोई गंभीर कार्य नहीं कर रहा हूं। केवल तुम्हारे संग अपनी अनुभूतियों को बांटने का मजा ले रहा हूं। अनुभव बांटना अपने आप में ही आनंद है। यदि तुम तक कुछ पंहुचे, तो धन्यवाद दो ईश्वर को। उसका वजूद नहीं है।

मुझे धन्यवाद मत दो--क्योंकि मैं हूं!